REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 10 | ISSUE - 11 | AUGUST - 2021

''प्राचीन भारतीय संस्कृति में शिव का स्वरूप : एक अवलोकन''

मदन मोहन मालवीय[1] & डॉ. मनोज कुमार[2]
[1]पी.जी. कॉलेज, भाटपार रानी देवरिया, उ.प्र.
[2]एशोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष (दर्शन शास्त्र विभाग).

प्रस्तावनाः–

भगवान शिव सम्पूर्ण भारतवर्ष में हिन्दू धर्मावलम्बियों के आराध्य देव हैं। उनके नाम पर भारतवर्ष में कई प्रकार के त्योहारों का आयोजन होता है। भिन्न–भिन्न रूपों में भिन्न–भिन्न तरीकों से जनमानस उन्हें प्रसन्न कर अपना अभिष्ट सिद्ध करने की कामना करते हैं। शिव की आराधना व पूजा सिन्धु–काल से ही की जाती रही है। काल–क्रम में शिव के अनेकानेक रूपों के दर्शन होते हैं। शिव की पूजा उपासना रूद्र के रूप में होती थी इसका पुरातात्विक एवं साहित्यिक प्रमाण उपलब्ध है। वेद मंत्रों में रूद्र का अनेक बार उल्लेख मिलता है। एशिया के विभिन्न अंचलों में फैली बिखरी आर्येत्तर जातियों के उपास्य देवता रूद्र ही रहे हैं। इनका स्वरूप भयंकर क्रोधी होना तथा संहारक देवता का रहा है।

श्वेताश्वर उपनिषद में 'अद्वितीय रूद्र' का उल्लेख प्राप्त होता है, जिसका संबंध शिव से स्थापित किया जा सकता है। इसी उपनिषद के दूसरे स्थल पर स्पष्टतः महेश्वर शिव का उल्लेख हुआ है।

पुराणों में शिव को स्थल कहा गया है क्योंकि समस्त चराचर जगत उनमें उत्पत्ति एवं लय को प्राप्त होता है। पुराणों के समय तक शिवोपासना प्रायः आर्येत्तर जातियों में ही प्रचलित थी। आर्यों के शिवोपासना के मूल में सम्भवतः सती का प्राण त्याग था। प्रजापति दक्ष ने अपनी कन्या का विवाह भगवान शिव से किया था परन्तु शंकर के प्रति दक्ष की अनिच्छा तब भी बनी हुई थी। परम्परा से आर्यों तथा आर्येत्तर जातियों में जो संघर्ष चला आ रहा था, इस पारंपरिक विरोध को समाप्त करने के लिए सती ने अपना प्राणोत्सर्ग किया था। तभी से आर्य–सभ्यता में शिव को आराध्य देव के रूप में अपनाया गया।

भारत के धार्मिक इतिहास में शैव तथा वैष्णव दो मुख्य तथा प्राचीनतम शाखाएं हैं। शैव धर्म–शाखा की अपनी विशिष्टता है तथा उपासना के मार्ग भी अलग रूप में विकसित हैं। वैदिक युग में शिव (रूद्र) और विष्णु, दोनों वैदिक देवताओं के रूप में अलग–अलग उल्लेखित हैं। अतः दोनों की उपासनाओं के मार्ग भी पृथक–पृथक रूप से प्रशस्त हुए। फिर भी यह निर्धारित करना कि दोनों में प्राचीनतम कौन है– सहज नहीं है। उपनिषदों में ब्रह्म का तादात्म्य शिव और विष्णु दोनों में पाया जाता है। इस रूप में भारत की धर्म प्राण जनता ने मुख्य रूप से शैव होने पर भी विष्णु के प्रति देवत्व की निष्ठा बनाए रखी और इसी प्रकार वैष्णव होने पर भी शिव के प्रति श्रद्धा का भाव बनाए रखा। शास्त्रों में एक ही परमतत्व के तीन रूप बताएं गए हैं– ब्रह्मा, विष्णु और महेश। ब्रह्मा का कार्य सृष्टि करना, विष्णु का कार्य सृष्टि–पालन (स्थिति) और महेश (शिव) का कार्य सृष्टि–लय है। किन्तु शैव–धर्म–दर्शन में शिव को स्वयमेव परमतत्व माना गया है और सृष्टि स्थिति तथा लय तीनों का कर्त्ता माना गया है।

सृष्टिकर्ता के रूप में शिव ब्रह्म स्वरूप हैं और हरिहर के रूप में विष्णु रूप भी। शिव परम कारूणिक हैं। उनमें अनुग्रह तथा प्रसाद गुणों का समन्वय है। शिव का उद्देश्य भक्तों का कल्याण करना है। वे श्रेय, शुभ, मंगल एवं कल्याण के पर्याय हैं। वे नानारूप सिद्धियों एवं कलाओं के अधिष्ठाता है। नाट्य शास्त्र का जनक होने के कारण वे नटराज कहलाते हैं। उनके द्वारा संगीत, नृत्य एवं 108 प्रकार की नाट्य–मुद्राओं की सृष्टि हुई। समस्त जीवधारियों के स्वामी होने के कारण पशुपति, भूतनाथ एवं भूतपति आदि नामों से उन्हें स्मरण किया जाता है। वे मायापति कहे जाते हैं। उमा का पति होने के कारण वे उमापति भी हैं। कण्ठ में गरल धारण करने के कारण उन्हें नीलकण्ठ कहा जाता है।

पुराणों तथा परवर्ती साहित्य में शिव की वन्दना योगीराज के रूप में की गई है। वे कैलाशवासी हैं एवं व्याघ्र–चर्म पर ध्यानलीन हैं। उनके सिर पर जटा जूट जिससे जगतपावनी गंगा का उद्गम हुआ है। उनके ललाट पर स्थित तृतीय नेत्र ज्ञानलोक का प्रतीक है।

इसी से उन्होंने कामदेव का दहन किया था। समस्त अनिष्टों के प्रतीक विष को समाहित करने के कारण उन्हें विषपायी कहा गया है। कण्ठ तथा भुजाओं में रूद्राक्ष धारण करते हैं। उनके वाम भाग में पार्वती एवं सम्मुख नन्दी विराजमान हैं। कर में वे त्रिशुल धारण किए हुए हैं। उनका मूर्त स्वरूप लिंग है जो उनके अविचल स्वभाव, अपरम्पार ज्ञान तथा अनन्य तेजबल का प्रतीक है और जनमानस की उपासना–भक्ति का अधिष्ठान है। उनका एक रूप रूद्र (प्रलयंकारी) है। अपने इस रूप में वे श्मशान, रणक्षेत्र तथा मृत्यु–स्थानों पर निवास करते हैं और मुण्डमाला धारण किए हुए भूत–प्रेतगण से घिरे रहते हैं। वे साक्षात् महाकाल हैं और उन्हीं के भू–विक्षेप मात्र से महाप्रलय की विनाशलीला होती है।

शिव अष्टमूर्ति हैं अर्थात् पंचमहाभूत, सूर्य, चन्द्र तथा पुरूष उन्हीं के स्वरूप हैं। बंधन तथा प्रपंच से मुक्ति के वे एकमात्र आधार हैं। शैव–सम्प्रदाय के मतावलंबियों की ऐसी मान्यता है कि शिव समस्त सृष्टि के सार्वभौम क्रिया–कलापों के अधिष्ठान एवं समस्त जीव जगत के अधिपति हैं।

सिंधु घाटी में शिव की पूजा होती थी। वहाँ से प्राप्त शिव की त्रिमुखाकृत मूर्तियाँ इसका प्रमाण है। शिव के चित्र मुद्राओं एवं ताम्रघट पर भी अंकित हैं।

सिंधु घाटी से योगासीन व्यक्ति का एक चित्र प्राप्त हुआ है जिसके दोनों ओर एक–एक नाग तथा सामने दो नाग बैठे हैं। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि योगी का यह चित्र भी शिव का ही है। एक अन्य मुद्रा पर धनुर्धर शिकारी अंकित है। अतः शिव की उपासना सिन्धु सभ्यता की ही देन है। शैव–धर्म सम्प्रदाय में शिव के कुछ प्रमुख प्रचलित रूप और भी है जिनका वर्णन प्राप्त होता है।

पशुपति को शिव का स्वरूप माना जाता है। महाभारत में इस तथ्य के प्रमाण उपलब्ध है। अर्जुन ने शंकर की उपासना करके उनसे पाशुपत अस्त्र प्राप्त किया था। एक संदर्भ में दक्ष प्रजापति द्वारा गद्गद् हृदय से शंकर की स्तुति करने का प्रमाण मिला है।

महाभारत में उल्लेख है कि शंकर ने दक्ष को पाशुपत व्रत धारण करने के लिए कहा था। इस संदर्भ में पाशुपत व्रत को समस्त वर्णों तथा आश्रमों के लिए मोक्षप्रद बताया गया है। अतएव यह मानना उचित है कि महाभारत काल में पाशुपत मत या शिवभक्ति का प्रचार पूर्णतः हो चुका था।

सिन्धु के उत्खनन से ऐसे अवशेष मिले हैं जिसमें एक तिपाई पर एक व्यक्ति विराजमान है, जिसका एक पैर मुड़ा हुआ है और एक नीचे की ओर लटका हुआ है। इसके तीन सिर है तथा सिर पर तीन सिंग हैं। इसके हाथ दोनों घुटनों पर हैं तथा इसकी आकृति ध्यानावस्थित है। इसके दोनों ओर पशु हैं। इनकी छाती पर त्रिशुल की आकृति अंकित है। मार्शल के अनुसार सिंधु घाटी में मिली यह मूर्ति भगवान शिव की है।

पाशुपत मत के साधकों के लिए पाँच तत्व बताएं गए हैं– पति, पशु, योगाभ्यास, विधि और दुःख मन्त्र। धर्म की साधना के लिए जो क्रिया में नियत है उन्हें विधि कहा गया है। वह दो प्रकार की है– व्रत और द्वार। भस्म स्नान भस्म शयन, जप, प्रदक्षिणा और उपवास आदि व्रत है। शिव का उच्चारण कर हँसना, गाल बजाना, गाना, नाचना बंबंकार करना तथा जप आदि उपद्वार हैं। द्वार के अंतर्गत जाग्रतावस्था में शयन मुद्रा, वायु वेगों की भाँति झूमना उन्मत्त की भाँति आचरण करना, कामातुरों जैसा व्यवहार करना, अर्थहीन शब्दों का व्यवहार करना ये छः क्रियाएं आती हैं। सिंधु की खुदाई से ऐसी मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जो पैरों की भाव –भंगिमा के कारण नृत्य की स्थिति का बोध कराती है। सिंधु घाटी के उत्खनन से एक ऐसा अवशेष मिला है जिस पर योग मुद्रा में

ध्यान की स्थिति में बैठे शिव की आकृति का अंकन है। इस मूर्ति के सामने दो तथा दोंनों ओर एक–एक सर्प की बैठी हुई आकृति बनी है। इससे यह प्रमाणित होता है कि उस समय ध्यान व योगाभ्यास का प्रचलन था।

शिव का एक रूप वनचारी का भी है। खुदाई के अवशेषों में एक अवशेष प्राप्त हुआ है जिसमें शिव तीर–धनुष लिए हैं और चलाने की मुद्रा में है।

सिन्धु की खुदाई से बहुत सारे छोटे–बड़े शिवलिंग प्राप्त हुए है। कुछ शिवलिंगों के उपरी भाग में छिद्र है जिससे पता चलता है कि लोग उसे धागे में पिरोकर धारण करते थे। कुछ शिवलिंग चूने, पत्थर एवं धोंधे के बने हुए मिले हैं जिससे यह ज्ञात होता है विभिन्न समुदाय के लोग विभिन्न प्रकार से शिवलिंगों की पूजा करते थे।

सिन्धु–सभ्यता के समय शिव की पूजा उपज के देवता के रूप में भी होती थी क्योंकि शिव का साहचर्य बैल से दिखता है। बैल का सम्बन्ध उत्पादकता से है। डॉ0 डी0डी0 कोशाम्बी ने शिवलिंग को उत्पादन का प्रतीक माना है। वहाँ के मूल निवासियों जंगली कबीलों एवं आर्येत्तर जातियों के देवता आरम्भ से शिव ही थे। ये जातियाँ काली थी, इसलिए इनके देवता शिव भी काले थे।

यदि शिव आर्यों के देवता होते तो इनका रंग गोरा ही वर्णित होता। शिव शक्ति के देवता के रूप में भारतीय जीवन में धुले–मिले हैं। इनके साथ इनका वाहन बैल है जो शक्ति का प्रतीक है। सांप भी एक जुझारू जीव है, बलशाली है, वन्य पशु है जो शिव के साथ जुड़ा हुआ है। स्पष्ट है कि शिव कबीलों के देवता थे।

मोहन जोदड़ो एवं हड़प्पा की खुदाई से योनियुक्त शिवलिंग के तरह का कोणाकार पत्थर की आकृतियाँ मिली हैं। इनके ऊपरी भाग में छिद्र है। ऐसा अनुमान है कि लोग इन्हें गुंथ कर धारण करते थे। ताबीज की तरह धारण करने का कारण यह हो सकता है कि लोग बीमारियों व भूत–प्रेतों से बचाने के लिए ऐसा करते थे। शंकर को भूतनाथ के रूप में भूतों का स्वामी माना जाता था। भूतों से बचने के लिए योनि पूजन व बारहसिंगे की सींग के भस्म का प्रयोग भी प्रमाणित होता है।

पुराणों में शिव भक्ति का सविस्तार उल्लेख हुआ है। शिव का महत्व विष्णु से भी पुरातन है। अधिकांश पुराणों में शिव को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। वहाँ शिव को सृष्टि–विनायक बताया गया है। पुराणों में शिव–पार्वती संवाद में पारमार्थिक विषयों का वर्णन किया गया है। लिंग पुराण में कहा गया है कि शिव ने स्वेच्छा से सर्वप्रथम नारायण को तथा ब्रह्मा को उत्पन्न किया और तत्पश्चात् सृष्टि का विस्तार हुआ। विष्णु पुराण विशुद्ध शैव पुराण है। यद्यपि यह भी ज्ञात होता है कि पुराण युग में भी परम्परागत रूप से आर्येत्तर देवता रूद्र थे तथा शिव के प्रतीक लिंग की पूजा का विरोध होता रहा है। वामन पुराण के दो संदर्भों से ज्ञात होता है कि ऋषियों के घोर विरोध के बावजूद ऋषि–पत्नियों ने लिंग पूजा की निष्ठा का परित्याग नहीं किया। कूर्म पुराण भी इस तथ्य की पुष्टि करता है। शिव पुराण में उल्लेखित है कि ऋषि–पत्नियों का अनुसरण कर अन्ततः ऋषियों ने भी लिंग पूजा का वरण किया। पुराणों में शिव के सर्वव्यापी स्वरूप का जो वर्णन हुआ उसका समाज व साहित्य पर व्यापक प्रभाव लक्षित हुआ है। साहित्य के ग्रन्थाकार भास, कालीदास शूद्रक तथा भवभूति से लेकर परवर्ती कवियों एवं नाटककारों ने शिव को एकमात्र वंदनीय माना एवं उनके स्वरूप का अपने–अपने ढंगों से चित्रण किया।

ऐसा प्रतीत होता है शंकराचार्य के आगमन के पूर्व ही सम्पूर्ण भारत में शिव के प्रति जननिष्ठा व्याप्त हो चुकी थी। सातवीं सदी ई0 में भारत के अन्तिम सम्राट हर्षवर्धन के शासनकाल में भारत–भ्रमण पर आए चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने यात्रा–वृतान्त में काशी, कन्नौज, काँची, मालावार और गांधार आदि विभिन्न प्रदेशों में स्थापित बहुसंख्यक शिव मंदिरों तथा शिवोपासकों का उल्लेख किया है। शंकराचार्य की दिग्विजय यात्रा के पश्चात् आठवीं सदी में सम्पूर्ण भारत के धार्मिक तथा वैचारिक क्षेत्रों में शिव की सत्ता को सर्वोपरि महत्व दिया जाने लगा तथा गाँवों से लेकर नगरों तक शिव–मंदिरों की स्थापना हुई। यद्यपि शिव की उपासना का वेदोत्तर भारत में प्रचार–प्रसार हो चुका था किन्तु मूलतः वे उन जातियों के उपास्य देव रहे जो बहुधा वनचर थी। यह शिव की उपासना हेतु प्रयोग में लाई गयी सामग्रियों से प्रमाणित होती है। परम्परानुसार वर्तमान समय में भी नैवेद्य सामग्री के रूप में मदार, केतकी, धतुर, बिल्वपत्र् आदि उपयोग में लाया जाता है। इससे प्रमाणित होता है कि शिव मूलतः वनचर जातियों के उपास्य थे, जिनकी सभ्यता–संस्कृति आर्यों से भिन्न थी। शिव भक्ति एवं आराधना के प्रति आज के जनजीवन में पूर्ण निष्ठा है। भारत की जनता शिव की अर्चना में विश्वास रखती है। अन्य देवी–देवताओं का प्रभाव आंचलिक है। दक्षिण भारत में विष्णु, पश्चिम में श्री कृष्ण, उत्तर में श्रीराम तथा

पूरब में शक्ति की उपासना का प्रचार है। किन्तु शंकर के प्रतीक लिंग की पूजा–भक्ति का प्रचलन समान रूप से सम्पूर्ण भारत में है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. उपनिषदों की भूमिका, डॉ0 राधाकृष्णन, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।
2. ऋग्वेद संहिता, पं0 दामोदर भट्ट स्वाध्याय मण्डल बोध, सतारा।
3. गीता (शांकर भाष्य), गीता प्रेस, गोरखपुर।
4. प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, राधाकृष्ण चौधरी, भारती भवन, इलाहाबाद।
5. भारतीय दर्शन की रूपरेखा, हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी।
6. भारतीय संस्कृति और साधना, (प्र.खण्ड), गोपीनाथ कविराज, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्।